बेसिक शिक्षा योजना

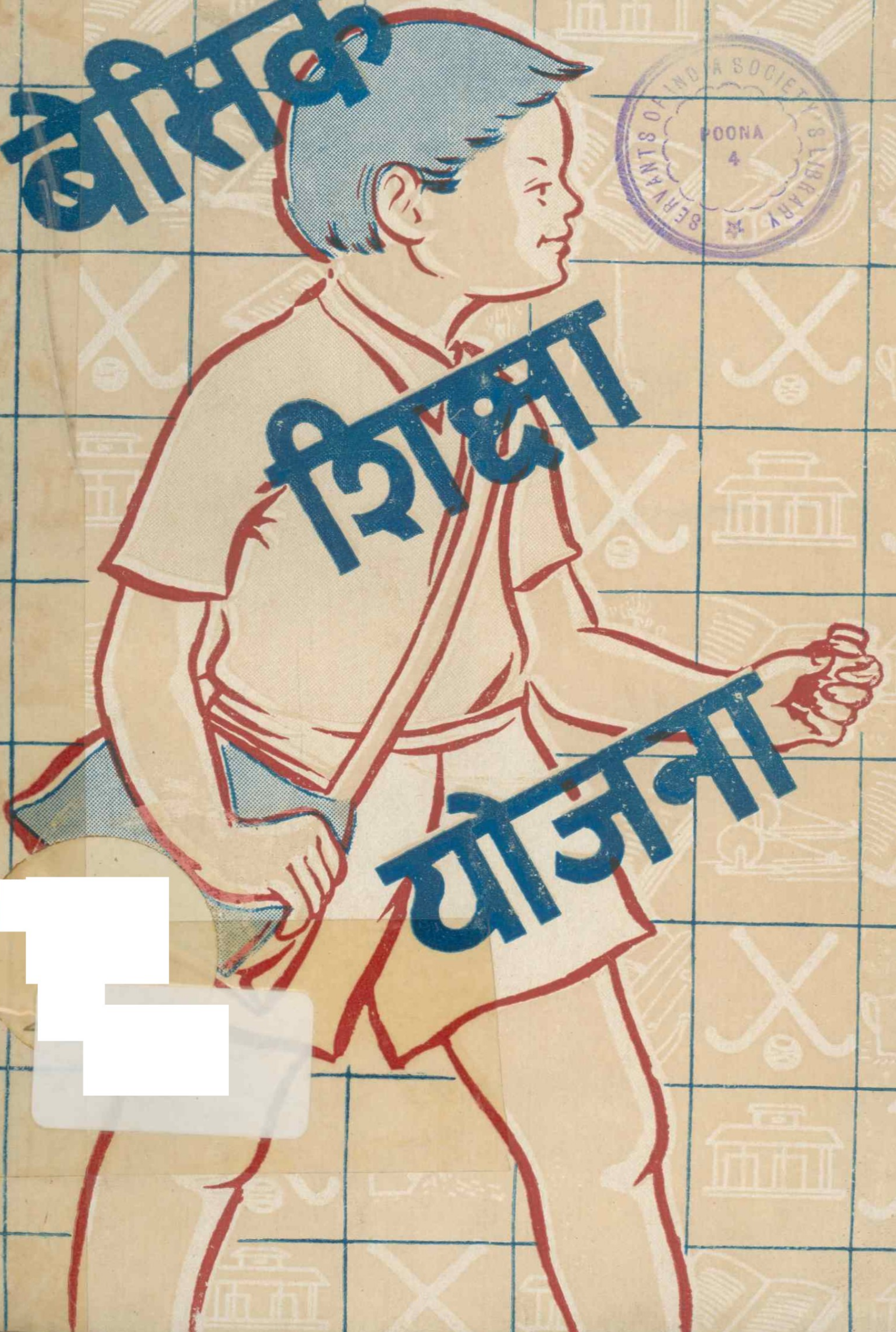

SERVANTS OF INDIA SOCIETY'S LIBRARY
POONA 4

बेसिक शिक्षा योजना

सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश,
लखनऊ

बेसिक शिक्षा योजना

"शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक के शारीरिक, बौद्धिक एवं नैतिक विकास से है। बालक की आन्तरिक शक्ति और सौन्दर्य को विकसित करना शिक्षा का उद्देश्य है। साक्षरता ही शिक्षा नहीं है। साक्षरता न तो शिक्षा का आदि है और न अन्त। वह तो मनुष्य को शिक्षित बनाने का साधन मात्र है। अतः शिक्षा का आरम्भ साक्षरता से नहीं, वरन् कार्य से होना चाहिए।"

—महात्मा गांधी

उपर्युक्त शब्दों में राष्ट्र-पिता ने शिक्षा के स्वरूप और उद्देश्य के विषय में सब कुछ कह दिया है। शिक्षा तब तक अपने वास्तविक उद्देश्य को पूरा नहीं कर सकती, जब तक वह राष्ट्रीय एवं उपयोगी न हो। वास्तविक शिक्षा वही है, जिसमें श्रम, कला, कौशल और संगीत आदि का समन्वय हो, जिससे विद्यार्थी की प्रतिभा का पूर्णरूपेण विकास हो सके और वह अपनी रुचि के विषयों का अध्ययन भलीभांति कर सके। शिक्षा, मनुष्य के उत्थान के लिए सृजनात्मक तथा रचनात्मक प्रवृति पैदा करने का साधन होनी चाहिए। किन्तु दासता के युग में शिक्षा की नीति भिन्न थी, जिसका उद्देश्य विदेशी सत्ता का शासन-यंत्र चलाने के लिए शिक्षित व्यक्तियों को तैयार करना था। उसका आधार राष्ट्रीय परम्परा, संस्कृति एवं सभ्यता न था। इस प्रकार की शिक्षा मनुष्य को निरर्थक और अनुपयोगी बनाने के अतिरिक्त और क्या कर ही सकती!

महात्मा गांधी ने विदेशी शासन की देन इस शिक्षा प्रणाली के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था "प्रारम्भिक शिक्षा प्रणाली न केवल निरर्थक है, अपितु घातक

भी है । अधिकतर बालक अपने माता-पिता के लिए किसी काम के नहीं रहते और अपना पैतृक व्यवसाय भी छोड़ देते हैं । उनमें बुरी आदतें पैदा हो जाती हैं, शहरी जीवन की हवा लग जाती है और जो थोड़ा बहुत उनके हाथ लगता है उसे शिक्षा नहीं कहा जा सकता ।"

इस प्रकार की शिक्षा का फल यह हुआ कि विद्यार्थियों को अपना भविष्य अंधकारमय दिखायी देता है । वे यह निश्चित नहीं कर पाते कि शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् उन्हें क्या करना है । बालक, बालिकाएं अतुल धन व्यय करके प्रारम्भिक से माध्यमिक, माध्यमिक से विश्वविद्यालय तक की शिक्षा इसलिए नहीं प्राप्त करते कि उन्हें शिक्षा से प्रेम होता है अथवा स्कूल तथा कालेजों में दी जाने वाली शिक्षा उनके लिए उपयोगी होने के कारण आवश्यक है । वास्तव में उन्हें यह ज्ञान ही नहीं होता कि वे इसके अतिरिक्त क्या कर सकते हैं अथवा उन्हें क्या करना चाहिए । इस प्रकार की शिक्षा के फलस्वरूप लगभग एक शताब्दी से देश के अधिकतर युवकों में निराशा और निरुत्साह घर कर गया है और उनके हृदय में राष्ट्रीय कर्तव्यों के प्रति उदासीनता व्याप्त है । शारीरिक कार्य एवं श्रम को वे हीन समझने लगे हैं, अध्यवसाय, त्याग और सेवा की भावना का उनमें ह्रास होने लगा है ।

स्वतंत्रता के पश्चात् यह स्थिति सह्य न थी, अतएव इसमें परिवर्तन करने के लिए प्रयास आरम्भ किये गये । पूज्य बापू द्वारा प्रदर्शित मार्ग अपनाया गया । तदनुसार शिक्षा प्रणाली को ऐसे स्वरूप प्रदान करने के प्रयत्न किये गये, जिससे विद्यार्थियों में मानवोचित गुण विकसित हो सकें । साक्षरता को शिक्षा का पर्याय न समझा जाय और शिक्षा का प्रारम्भ साक्षरता से नहीं वरन् कार्य से हो । इस लक्ष्य की प्राप्ति केवल कार्य, निरीक्षण, अनुभव, प्रयोग, सेवा और प्रेम से ही संभव है । इनके अभाव में केवल पुस्तकों के अध्ययन-

बेसिक शिक्षा पर व्यय

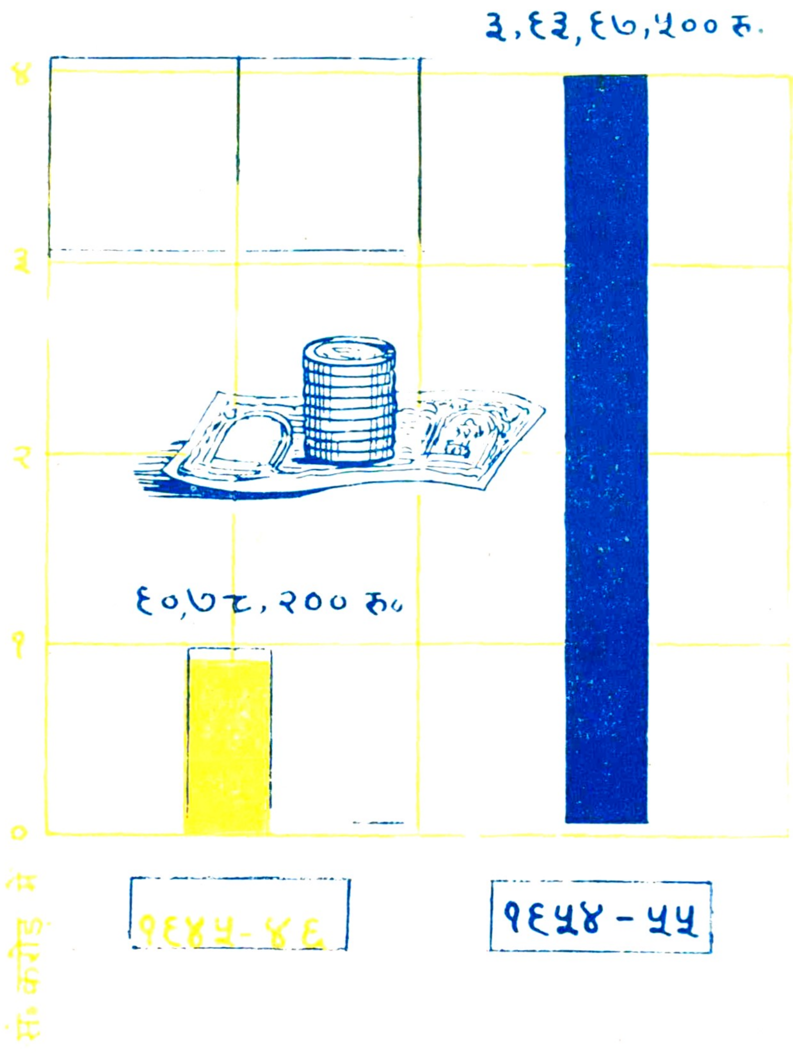

शिक्षा-मंत्री श्री हरगोविंद सिंह एक बेसिक स्कूल का निरीक्षण करते हुए।

मात्र से विद्यार्थी का न तो आध्यात्मिक विकास एवं बौद्धिक उन्नयन हो पाता है और न शारीरिक विकास ही।

वर्धा शिक्षा योजना

सन् १९३५ के भारतीय शासन विधान के अधीन १९३७ में विभिन्न प्रान्तों में सर्व प्रथम कांग्रेस मंत्रि-मंडलों की स्थापना हुई और जन-प्रिय सरकारों को शिक्षा-प्रणाली में परिवर्तन करने का अवसर मिला। इसी काल में गांधी जी की अध्यक्षता में अक्टूबर, १९३७ में देश के शिक्षा विशारदों और शिक्षा-मंत्रियों का एक सम्मेलन वर्धा में आयोजित हुआ। इस सम्मेलन ने शिक्षा-प्रणाली में सुधार

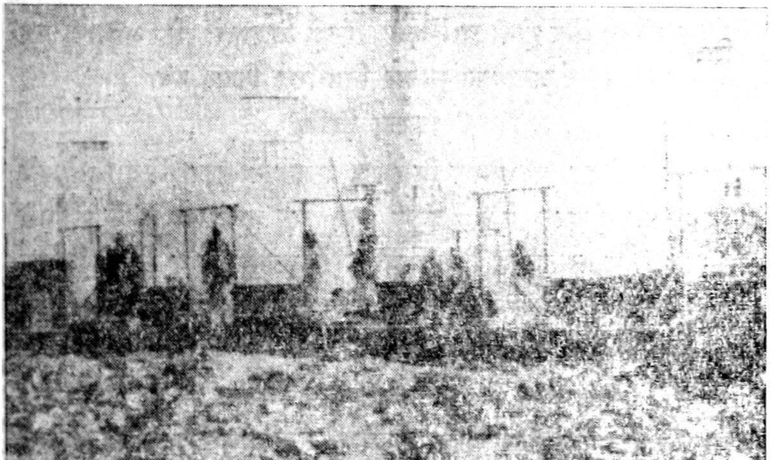

एक स्कूल भवन का निर्माण

के लिए सुझाव देने हेतु डाक्टर जाकिर हुसैन की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की जिसने गांधी जी के परामर्श से उसी वर्ष दिसम्बर में शिक्षा की एक पूर्ण योजना तैयार की। सम्मेलन

द्वारा स्वीकृत होने पर इस योजना को कांग्रेस ने बेसिक शिक्षा योजना के रूप में स्वीकार किया और तत्कालीन जनप्रिय सरकारों ने यथासंभव इसको आदर्श मानकर कार्य करने का निश्चय किया।

इस योजना के अन्तर्गत ७ वर्ष की अवधि या उससे अधिक अनिवार्य शिक्षा निःशुल्क दिये जाने का सुझाव था और मातृ भाषा को ही शिक्षा का माध्यम बनाने तथा अंग्रेजी को छोड़ कर हाई स्कूल के अन्य सभी विषयों के अतिरिक्त विद्यार्थियों को एक व्यवसाय भी सिखाने का प्रस्ताव किया गया था, जिससे कि बालकों के हृदय में श्रम और उद्योग के प्रति सम्मान की भावना जागृत हो और शिक्षा कम व्यय-साध्य भी हो। गांधी जी के अनुसार इसी प्रकार की शिक्षा प्रणाली आत्म-निर्भर हो सकती है और होनी चाहिए। इन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर बेसिक शिक्षा योजना का स्वरूप निर्धारित किया गया।

शिक्षा विधि

इस योजना की प्रमुख विशेषता दस्तकारी द्वारा विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान करना है। इसके लिए यह आवश्यक है कि जो भी दस्तकारी या हस्तकला विद्यार्थियों को सिखायी जाय उसके शिक्षण का आधार और रीति वैज्ञानिक हो ताकि बालक को उसका पूर्ण ज्ञान हो सके। दस्तकारी का केवल यह अर्थ नहीं है कि उपादेय कार्य हो सके, अपितु इससे विद्यार्थी का बौद्धिक विकास भी हो सकता है। वास्तव में व्यावसायिक शिक्षा बालक के सर्वांगीण विकास का सर्वोच्च साधन हो सकती है। इससे विद्यार्थी का मस्तिष्क सक्रिय तथा चेतन बना रहता है। तात्पर्य यह है कि किसी भी दस्तकारी का ज्ञान व्यावहारिक प्रशिक्षण द्वारा सिखाया जाना चाहिए। किसी भी व्यवसाय के आधार के लिए विद्यार्थी के शरीर, मस्तिष्क और लेखन, उसकी कलात्मक प्रवृति आदि सभी को संवारना होता है। इस का यह अर्थ नहीं है कि ग्रामीण बालकों को केवल दस्तकारी सिखायी

जाय, बल्कि इतिहास, चित्रकला, संगीत, भूगोल आदि विविध विषय दस्तकारी द्वारा सिखाये जाने चाहिए ।

शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्तियों को अनुभव से यह पता चल जाता है कि वास्तविक शिक्षा व्यावहारिक रीति से दी जाने पर अधिक सफल होती है । अध्यापक जानते हैं कि १३ वर्ष तक बालक किसी चीज को बनाने, बिगाड़ने और तोड़ने-फोड़ने

स्कूल के अहाते में बागवानी सम्बन्धी कार्य

में रुचि लेते हैं । प्रकृति द्वारा शिक्षा देने की यही प्रणाली है । बालकों को किताबें लेकर एक स्थान पर बैठने के लिए बाध्य करना उनके प्रति अत्याचार होगा । अनेक शिक्षा-विशारदों ने शारीरिक श्रम के किसी कार्य को शिक्षा के केन्द्र विन्दु के रूप में अपनाने पर जोर दिया है । इस प्रकार की शिक्षा प्रणाली अमरीका में 'प्रोजेक्ट मैथड' और रूस में "कमप्लेक्स मैथड" कहलाती है ।

शिक्षा का आत्म-निर्भर स्वरूप इस योजना की दूसरी विशेषता है। वर्धा योजना में आत्म-निर्भर शब्द का प्रयोग दो अर्थों में हुआ है। प्रथम शिक्षा का वह रूप जो विद्यार्थी को बाद के जीवन में आत्म-निर्भर बनाने में सहायक हो और द्वितीय वह शिक्षा जो स्वयं में आत्म-निर्भर हो इस योजना में दस्तकारी को वास्तव में इसीलिए स्थान दिया गया है जिसमें बालक-बालिकाओं को शिक्षा समाप्त करने के बाद जीविकोपार्जन के लिए किसी का मुखापेक्षी न बनना पड़े।

इस योजना की तीसरी विशेषता ७ वर्ष की अवधि तक अनिवार्य तथा निःशुल्क शिक्षा है। आज अनिवार्य शिक्षा का यह अर्थ समझा जाता है कि माता-पिता को बच्चों की शिक्षा के लिए फीस नहीं देनी पड़ती। किन्तु वर्धा योजना में यद्यपि माता-पिता फीस देने से मुक्त होंगे तथापि बच्चों को अपने शारीरिक श्रम द्वारा उत्पादन करके अपना शिक्षण-शुल्क अदा करना होगा। वर्धा योजना के अधीन शिक्षा के उद्देश्यों को देखते हुए आवश्यक होगा कि बालक ७ वर्ष तक स्कूल में रहें। जहां तक वय का प्रश्न है, बालकों की अवस्था ७ से १४ तक निश्चित की गयी है। वय संबंधी यह प्रतिबन्ध इसलिए रखा गया है जिसमें बालक सामाजिक तथा नागरिक ज्ञान संबंधी आवश्यक बातें सीख सकें और आगे चल कर अच्छे नागरिक बन सके। इस प्रकार का ज्ञान ७ वर्ष की उम्र के पहले नहीं अर्जित किया जा सकता। इस अवधि में बालक किसी न किसी बुनियादी दस्तकारी में इतनी कुशलता प्राप्त कर सकता है कि भविष्य में उस व्यवसाय को सफलतापूर्वक अपना कर जीवन-निर्वाह कर सकता है।

इस सिलसिले में एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह भी उठता है कि शैक्षिक एवं आर्थिक दृष्टियों से क्या राज्य द्वारा ७ वर्ष तक बच्चों को उस दशा में अनिवार्य रूप से पठन-पाठन के लिए बाध्य करना उचित होगा, जब माता-पिता पांच वर्ष तक बच्चों को स्कूल में नहीं रखना

बेसिक स्कूलों में छात्रों की संख्या

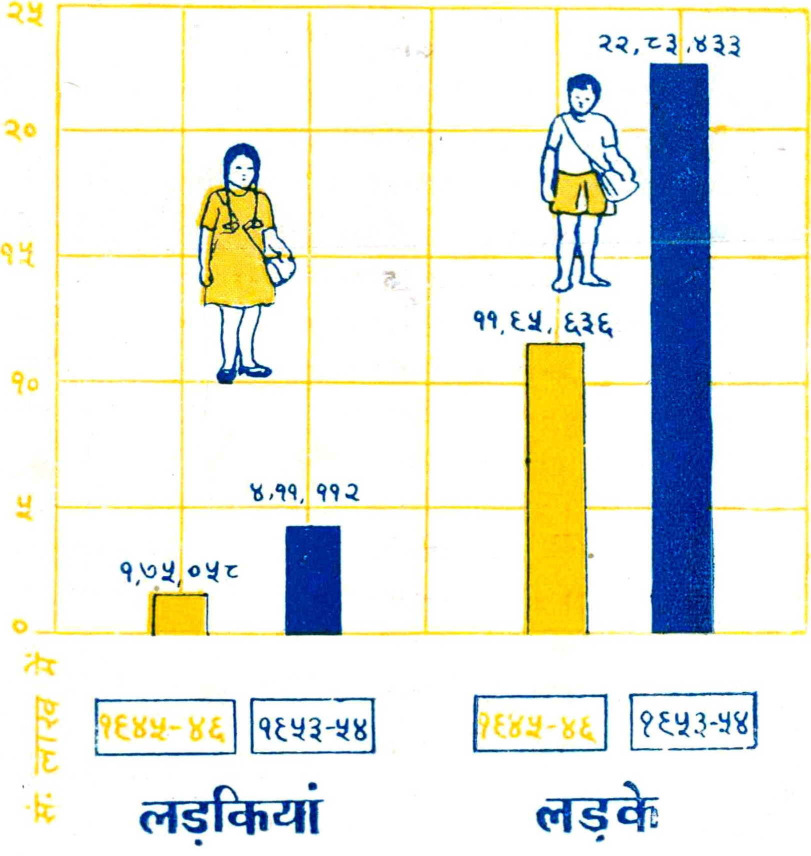

चाहते। देश और बालक दोनों के भविष्य के हित में राज्य-सरकार द्वारा इस प्रकार का प्रतिबंध लगाना सर्वथा उचित है, क्योंकि इन बालकों की शिक्षा के लिए माता-पिता को खर्च नहीं करना पड़ता और सात वर्ष के बाद जब वे अपना शिक्षण-काल समाप्त करके जीवन में प्रवेश करते हैं वे किसी न किसी व्यवसाय में कुशलता प्राप्त कर लेते हैं और अपने तथा अपने परिवार वालों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

बेसिक शिक्षा योजना के अन्तर्गत मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाना निश्चित किया गया है। मातृभाषा केवल शिक्षा का माध्यम ही न होगी अपितु पाठ्यक्रम की भाषाओं में उसका सर्व प्रथम स्थान होगा जैसा कि अभी तक अंग्रेजी के विषय में था। मातृभाषा का उचित अध्यापन, शिक्षा की आधार शिला है। सही उच्चारण और धाराप्रवाह की लेखन और प्रवाहपूर्ण ढंग से बोलने की क्षमता के अभाव में किसी भी व्यक्ति में सूक्ष्म भाव और स्पष्ट विचार विकसित नहीं हो सकते। इसके अतिरिक्त मातृभाषा का पल्ला पकड़कर बालक अपने पूर्वजों की बहुमूल्य परम्पराओं और विचारों, भावनाओं एवं आकांक्षाओं से परिचित हो सकता है और इस प्रकार इसे सामाजिक शिक्षा का एक बहुमूल्य साधन बनाया जा सकता है। साथ ही मातृभाषा के माध्यम से आध्यात्मिक और नैतिक गुणों का उसमें समावेश किया जा सकता है। सर्वोपरि बालक की कलात्मक प्रवृति की वास्तविक अभिव्यक्ति इसी के द्वारा सम्भव है। यदि बालक के शिक्षण का उचित मार्ग अपनाया जाय तो इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि साहित्य से न केवल उसे आनन्द ही प्राप्त हो सकेगा वरन् उसकी रचनात्मक क्षमताओं का विकास भी होगा।

उत्तर प्रदेश में बेसिक शिक्षा

उत्तर प्रदेश के तत्कालीन कांग्रेस मंत्रिमंडल ने वर्धा योजना के

आधारभूत सिद्धान्तों को स्वीकार कर लिया और आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में, राज्य की आवश्यकताओं का ध्यान रखते हुए वर्धा-योजना के आधार पर, सुझाव देने के लिए एक समिति नियुक्त की। इस समिति ने यथेष्ट श्रम और छानबीन के बाद सन् १९३८ में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें शिक्षा-प्रणाली में सभी स्तरों पर परिवर्तन के सुझाव दिये गये। समिति के सुझावों के आधार पर सन् १९३८ में बेसिक शिक्षा प्रणाली लागू की गयी।

नयी शिक्षा प्रणाली लागू होने से ४ वर्ष की अवधि में ही १५,००० प्राइमरी स्कूलों ने बेसिक पाठशालाओं का रूप धारण कर लिया। सन् १९३९ में लोक-प्रिय मंत्रिमंडल ने त्याग-पत्र दे दिया और प्रदेश में गवर्नरी शासन स्थापित हो गया।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद

युद्ध काल में बेसिक शिक्षा का कार्य तीव्र गति से आगे न बढ़ा। सन् १९४६ में पुनः प्रदेश में जनप्रिय मंत्रिमंडल की स्थापना हुई और तुरन्त प्राइमरी शिक्षा प्रसार की एक दसवर्षीय योजना बनायी गयी, जिसके अनुसार प्रतिवर्ष २,२०० स्कूल खोलने का निश्चय किया गया, इस प्रकार दस वर्षों में २२ हजार स्कूल खोलने का निर्णय किया गया। इस प्रकार राज्य के प्रत्येक डेढ़ मील के क्षेत्र में एक स्कूल स्थापित हो जायगा और ६ से ११ वर्ष की उम्र के सभी बच्चों को अनिवार्य शिक्षा दी जा सकेगी। योजना-अवधि के प्रथम वर्ष में ही २,२०० के स्थान पर २,३५० स्कूल खोले गये। योजना लागू होने के बाद ५ वर्ष की अवधि में १२,००० से भी अधिक प्राइमरी स्कूल खोले गये।

नवीन शिक्षा पद्धति को उपयोगी बनाने के लिए पाठ्यक्रम में भी संशोधन किये गये और पाठ्यक्रम में हस्तकला, भाषा, गणित, समाज-विज्ञान, सामान्य-विज्ञान और शरीर-विज्ञान विषय भी सम्मिलित

किये गये। अध्यापकों की ट्रेनिंग की उचित व्यवस्था की गयी और प्रत्येक जिले में एक नार्मल स्कूल या बेसिक ट्रेनिंग केन्द्र खोला गया। साथ ही २२ हजार नये खुलने वाले स्कूलों के लिए प्रत्येक जिले में सचल शिक्षादल की स्थापना की गयी।

नये प्रकार के इन स्कूलों की स्थापना पर सरकार को भारी व्यय करना पड़ा जिसका विवरण इस प्रकार है —

वर्ष	स्कूलों की संख्या	आवर्तक	अनावर्तक	
			भवन-निर्माण	साज-समान
		रु०	रु०	रु०
१९४७–४८	२,३११	३,६६,०००	२३,५,००००	२,२०,०००
१९४८–४९	४,५६९	२६,६६,०००	१६,५०,०००	७,३६,०००
१९४९–५०	४,१२०	६१,१४,०००	२२,००,०००	७,७७,०००
१९५०–५१	५५०	१,४६,७९,०००	३,००,०००	८,३२,०००
१९५१–५२	५५०	१,७४,२७,४११	१,००,०००	..
१९५२–५३	२५०	२,७८,६०,०४०	२,००,०००	..
योग	१२,३५०	६,९१,७२,४५१	६८,००,०००	२५,६५,०००

इसके अतिरिक्त प्राइमरी स्कूलों को बेसिक स्कूलों का रूप प्रदान करने में इस प्रकार व्यय हुआः—

	रु०
१९४५–४६	७४,८९५
१९४६–४७	२,२४,२०३
१९४७–४८	५,००,५६२
१९४८–४९	५,२६,९४१
१९४९–५०	६,२१,३९७
१९५०–५१	५,००,१७८
१९५१–५२	५,०२,१५८
१९५२–५३	५,०८,०९८
योग	३४,५८,४३२

उपर्युक्त आंकड़ों से प्रगट है कि हमारे राज्य ने बच्चों को अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने की दिशा में यथेष्ट प्रगति की है, और ६ से ११ वर्ष तक की आयु के ४० प्रतिशत बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था हो गयी है, किन्तु अभी बहुत करना शेष है। जन-प्रिय सरकार इस सम्बन्ध में अपने उत्तरदायित्व के प्रति जागरूक है। शिक्षा के मद में सरकार के व्यय में निरंतर वृद्धि हुई है। इस वर्ष १९५५–५६ के बजट में शिक्षा पर कुल १२ करोड़ १८ लाख ४६ हजार ११० रु० व्यय का अनुमान है। शिक्षा-अनुदान में गत वर्ष की अपेक्षा ७४ लाख रुपया अधिक रखा गया है। इसके अतिरिक्त अन्य विभागों के अन्तर्गत भी शिक्षा पर काफी व्यय होगा। अनुमानित व्यय का पूर्ण विवरण इस प्रकार है:—

	रु०
शिक्षा अनुदान	१०,२१,१८,०००
हरिजन विभाग में शिक्षा पर व्यय	४८,६१,१००
पुनर्वास विभाग में शिक्षा पर व्यय	११,७१,०००
औद्योगिक और व्यवसायिक शिक्षा पर व्यय	१,३६,९६,०१०
योग ..	१२,१८,४६,११०

कोई भी योजना अनमनीय नहीं होती, वह तो समय की आवश्यकता को देखते हुए बनायी जाती है अतएव आवश्यकतानुसार उसमें संशोधन जरूरी है। विदेशी-काल की शिक्षा पद्धति ने जीवन के प्रति उदासीनता और निष्कर्मण्यता की भावनाओं को जन्म दिया। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद जब हम देश के निर्माण में संलग्न हैं, ये भावनाएं हमारे प्रगति-मार्ग को अवरुद्ध करने वाली हैं। अतएव उत्तर प्रदेश में ऐसी शिक्षा-प्रणाली की आवश्यकता है जिससे उत्साह और कर्मण्यता

बेसिक ट्रेनिंग कालेज में विद्यार्थी बुनाई सीख रहे है।

बेसिक स्कूलों की संख्या

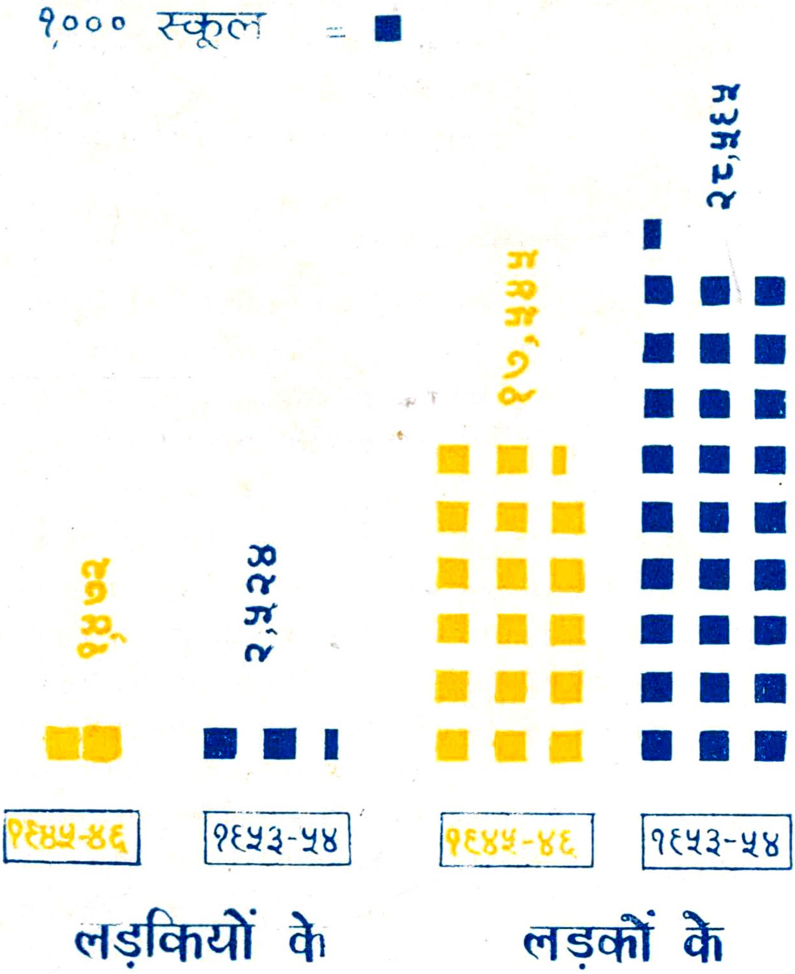

१,००० स्कूल = ■
१,४७२
२,५२४
१७,५४५
२८,५३५
१९४५-४६
१९५३-५४
१९४५-४६
१९५३-५४
लड़कियों के
लड़कों के

का वातावरण पैदा हो। बेसिक शिक्षा पद्धति अपना कर समय की मांग के अनुकूल वातावरण उत्पन्न करने का प्रयास किया गया है। बेसिक शिक्षा पद्धति द्वारा युवकों को समर्थ और शक्ति-शाली बनाने का प्रयास किया जा रहा है, जिससे वे स्वदेश के प्रति अपने दायित्व को वहन् कर सकें। बेसिक शिक्षा का मूल-मंत्र निष्कर्मण्यता के विपरीत उद्यम है। उद्यम-शील मनुष्य ही प्रगति पथ पर सफलता पूर्वक अग्रसर हो सकता है और यदि "आराम हराम है" का नारा देश की मांग का परिचय देता है, तो उस पृष्ठ भूमि में "उद्यम" ही हमारे समाजवादी, कल्याणकारी राज्य का यथार्थवादी रूप प्रदान कर सकता है।

बेसिक शिक्षा के स्वीकृत सिद्धान्त

यहां बेसिक शिक्षा के स्वीकार किये गये सिद्धान्तों का उल्लेख करना असंगत न होगा—

१—बेसिक शिक्षा, शिक्षा की वह पद्धति है जिसमें विद्यार्थी की मानसिक और शारीरिक आवश्यकताओं की ओर पूरा ध्यान दिया जाता है।

यह निर्विवाद है कि बालकों का पारिवारिक और सामाजिक वातावरण उनमें विशेष प्रकार की मनोवृतियां उत्पन्न करता है। साथ ही वातावरण और मनोवृत्तियों का प्रभाव उनकी शारीरिक स्थिति पर पड़ता है। अतएव शिक्षा पद्धति ऐसी होनी चाहिए जिसमें इन बातों का ध्यान रखा जाय और बालकों के स्वभाव के अनुसार उनको विकास का पूर्ण अवसर प्राप्त हो सके। यदि वातावरण के फल-स्वरूप बालक में कलात्मक प्रवृत्तियां उत्पन्न हो चुकी हैं तो उसे बीज गणित अथवा दर्शन सम्बन्धी विषयों में रुचि न होना संभव है। उसे तो उन्हीं में विकास करने का अवसर प्राप्त होना चाहिए। इन्हीं बातों को

प्रधानता देते हुए बालकों की मानसिक आवश्यकताओं पर जोर दिया गया है।

(२) अध्ययन काल में कार्य करना अनिवार्य हो। केवल पुस्तकों के अध्ययन से मनुष्य का विकास संभव नहीं। उपयोगी नागरिक बनने के लिए क्रियात्मक जीवन से विद्यार्थी का निकट सम्पर्क होना चाहिए। इसीलिए अध्ययन-काल में कार्य की महत्ता को स्वीकार किया गया।

(३) शिक्षा का केन्द्र कोई हस्तकौशल होना चाहिए। इस संबंध में यह सिद्धान्त स्वीकार किया गया कि हस्तकौशल और शिक्षा में अन्योन्याश्रित संबंध होना चाहिए।

इस प्रकार उद्योग अथवा कला के शिक्षात्मक महत्व पर बल दिया गया है अर्थात् हस्तकौशल को शिक्षा से या शिक्षा को हस्तकौशल से अलग रखने का प्रयास नहीं किया गया है।

(४) उपयुक्त सामाजिक वातावरण में अनुभव के आधार पर शिक्षा दी जानी चाहिए जिससे शिक्षा सोद्देश्य और सृजनशील हो।

जिस शिक्षा-प्रणाली में सामाजिक वातावरण को उचित स्थान न होगा वह विद्यार्थियों के लिए उपयोगी नहीं हो सकती अतएव वातावरण में जो सामान्य अनुभव प्राप्त होते रहते हैं उनके अनुरूप शिक्षा-पद्धति होने से अध्ययन विद्यार्थियों के लिए विशेष रुचिकर हो सकता है।

"शिक्षा, शिक्षा के लिए" ऐसी कोई चीज नहीं। शिक्षा का उद्देश्य तो विवेकशील प्रवृतियों को जागृत कर मनुष्य को अधिक उपयोगी बनाना है। अतएव शिक्षा सोद्देश्य होनी ही चाहिए। साथ ही मनुष्य को समाज का उपयोगी अंग बनाने के लिए शिक्षा को सृजनशील भी होना चाहिए। किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि इस भांति शिक्षा को आत्मनिर्भर

बनाया गया है। किन्तु जहां तक शिक्षा के स्वयं में आत्म-निर्भर होने का प्रश्न है, इस सिद्धान्त को इस राज्य में नहीं अपनाया गया है। इस सिलसिले में मुख्य मंत्री, डाक्टर सम्पूर्णानन्द के विचार, जो उन्होंने लखनऊ में 'प्रादेशिक शिक्षा सेवा संघ' के छठवें अधिवेशन में ६ फरवरी, १६५५ को व्यक्त किये थे, उल्लेखनीय हैं—"किसी भी समाज या सरकार के लिए यह अत्यन्त लज्जास्पद विषय होगा, यदि वह शिक्षा का व्यय कुमार बालकों की शारीरिक शक्ति पर छोड़ दे। यह तो अग्रेजों का सौभाग्य ही नहीं वरन् उनका कर्त्तव्य भी है, कि वे अनुजों की शिक्षा का व्यय वहन करें। हम अपने बालकों की शिक्षा का व्यय उनके द्वारा पैदा की गयी मूली या गाजर से नहीं पूरा कर सकते। निस्संदेह दस्तकारी का अध्यापन होगा, लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं कि इसको अतिरंजित किया जाय।"

"साथ ही यह सोचना भी भ्रमपूर्ण है कि इस प्रकार की शिक्षा का उद्देश्य स्कूलों या गांवों को आत्मभरित बनाना है। आज के जीवन में आत्मभरित शब्द किसी के लिए प्रयोग करना उपयुक्त नहीं है, क्योंकि विज्ञान और टेक्नालोजी के विकास के परिणामस्वरूप वर्तमान युग में विचारों में ही जटिलता उत्पन्न नहीं हुई है, वरन् हमारा सामाजिक और आर्थिक ढांचा भी अति जटिल हो गया है और सभी अन्योन्याश्रित हैं। कोई भी वस्तु आज स्वयं में पूर्ण नहीं है और आत्मनिर्भर रह कर सामाजिक जीवन व्यतीत करना असंभव सा है। अतएव बेसिक शिक्षा पद्धति इस असत्य की कल्पना नहीं करती, जिसका आत्मभरित शिक्षा से भास मिलता है। इसका उद्देश्य शिक्षा और जीवन में निकट सम्पर्क स्थापित करना है, शिक्षा को जीवनोपयोगी बनाना और बापू के शब्दों में बालक की आन्तरिक शक्ति और सौन्दर्य को विकसित करना है।"

उत्तर प्रदेशीय सरकार बच्चों के शारीरिक श्रम से केवल बिक्री का सामान तैयार कराके शिक्षा को आत्मनिर्भर बनाने के सिद्धान्त के निश्चित रूप से विरुद्ध है। यह बात दूसरी है कि अध्ययन-काल में वे कुछ सामान बनायें और उसे बेच दिया जाय।

५—अध्यापकों के पुनस्संगठन और ट्रेनिंग पर विशेष जोर दिया जाय।

यह तो स्पष्ट है कि नये प्रकार के अध्यापन के लिए शिक्षकों को नया दृष्टिकोण अपनाना होगा जिससे वे बच्चों को उचित और उपयुक्त रचनात्मक शिक्षा प्रदान कर सकें। अतएव उनकी ट्रेनिंग और पुनस्संगठन की आवश्यकता का अनुभव किया गया।

अध्यापकों का प्रशिक्षण

बेसिक शिक्षा के कार्य को सुचारु रूप से चलाने के लिए एक बड़ी संख्या में अध्यापकों की आवश्यकता थी। साथ ही उनको प्रशिक्षित करने की समस्या भी कम जटिल और गम्भीर न थी। इस समस्या को हल करने के लिए प्रदेश में बेसिक ट्रेनिंग के आठ केन्द्र और एक केन्द्रीय बेसिक ट्रेनिंग कालेज की स्थापना की गयी। इन ८ रिफ्रेशर शिक्षण केन्द्रों में अध्यापकों को २ से ३ दलों में ट्रेनिंग देने का प्रबन्ध किया गया। ट्रेनिंग की अवधि ९ माह निश्चित की गयी। यह ट्रेनिंग एक ही बार में देना संभव न था अतएव प्रायः ३ खण्डों में पूरी ट्रेनिंग देने का कार्यक्रम बनाया गया। प्रत्येक खण्ड की प्रशिक्षण अवधि ३ या ४ माह रखी गयी; दूसरे या तीसरे खण्ड में तीसरी कक्षा से पांचवीं कक्षा तक के अध्यापन कार्यों की ट्रेनिंग दी गयी।

प्रारम्भिक स्कूलों के प्रसार की योजना कार्यान्वित होने पर सचल प्रशिक्षक दल स्थापित किये गये थे। इन दलों ने प्राइमरी स्कूलों के अध्यापकों को उन्हीं के स्थानों में जा कर प्रशिक्षण देने का

विद्यार्थियों द्वारा श्रमदान

बेसिक स्कूलों में अध्यापकों की संख्या

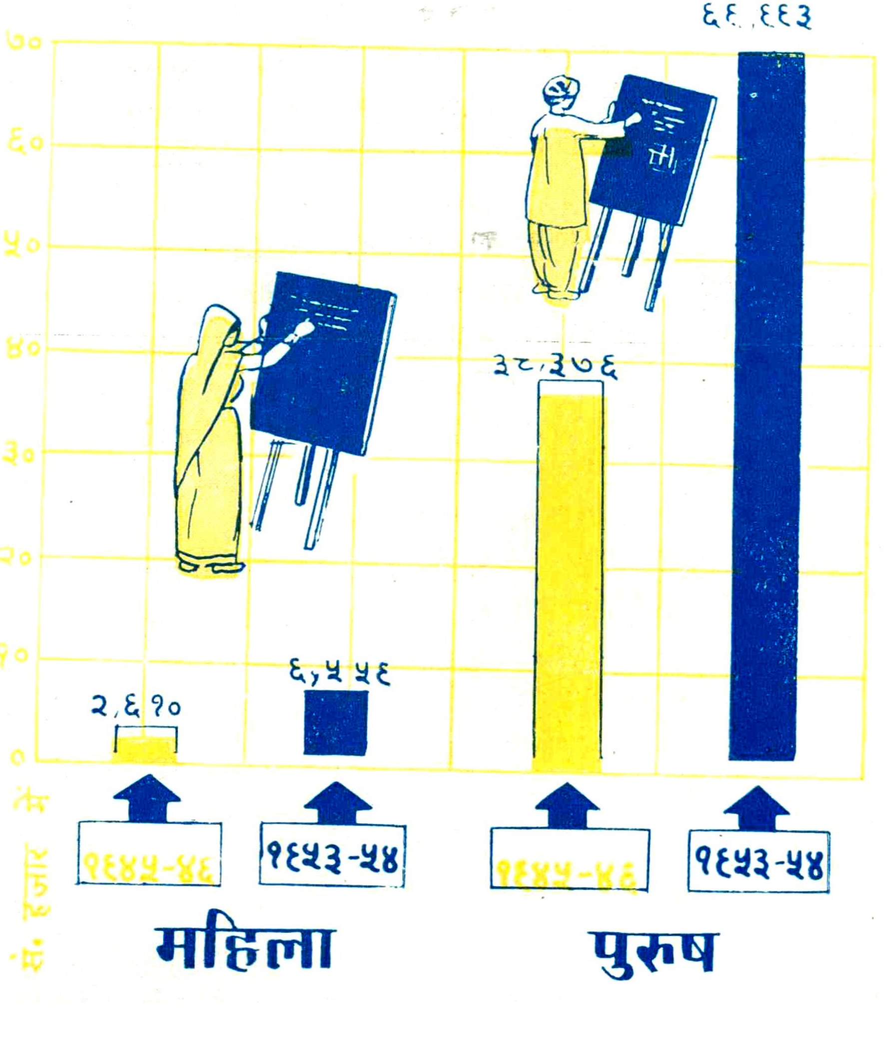

कार्य किया। अध्यापकों को उन्हीं के प्राप्त अनुभवों के आधार पर प्रशिक्षित किया गया।

प्रशिक्षित अध्यापकों की आवश्यकता को शीघ्र पूरा करने के लिए इससे सरल अन्य कोई उपाय न था। साथ ही इस प्रणाली को अपना कर प्रसार-कार्य भी भली-भांति चालू रखना संभव था। इस प्रकार जो ट्रेनिंग दी गयी वह सामयिक आवश्यकता को देखते हुए पर्याप्त थी। प्रशिक्षण प्रदान करने वाली संस्थाओं की संख्या में भी वृद्धि की गयी। इस भांति ऐसी संस्थाओं की संख्या बढ़कर सन् १९४९ में ५१ हो गयी जबकि १९३९ में ऐसी केवल १३ संस्थाएं थीं। प्रशिक्षण पाठ्य-क्रम बेसिक शिक्षा के सिद्धान्तों के अनुकूल निर्धारित किया गया।

पुराने प्रशिक्षित अध्यापकों को नये प्रकार से प्रशिक्षित कर उनको वर्तमान स्थिति के अनुकूल बनाना सरल कार्य न था। इसके विपरीति नये व्यक्तियों को प्रशिक्षित करना कहीं सरल था। इस संबंध में केन्द्रीय शैक्षणिक संस्था, इलाहाबाद के बेसिक ट्रेनिंग कालेज ने अध्यापकों को निरंतर सहायता प्रदान की। प्रशिक्षण कार्य को अधिक सुचारु ढंग से चलाने के लिए बाद को यह काम जूनियर ट्रेनिंग कालेजों द्वारा किया जाने लगा।

प्राइमरी शिक्षा के प्रसार के लिए बड़ी संख्या में अध्यापकों की आवश्यकता थी क्योंकि प्रतिवर्ष हजारों नये स्कूल खोलने की योजना अपनायी जा चुकी थी। अब तक ७ बेसिक नार्मल स्कूल प्रशिक्षित अध्यापकों की मांग पूरा करते थे, किन्तु नयी परिस्थिति में वे पर्याप्त संख्या में अध्यापकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था करने में असमर्थ थे। अतएव सचल शिक्षक दल स्थापित किये गये। इन दलों ने हिन्दुस्तानी टीचर्स सर्टिफिकेट के कोर्स का प्रशिक्षण देना आरम्भ किया। यह अनुभव किया गया कि पहले की एक वर्ष

को प्रशिक्षण अवधि इस कार्य के लिए यथेष्ट न थी। इसलिए यह अवधि २ वर्ष कर दी गयी। इससे विशेष लाभ यह हुआ कि अध्यापकों, को नगरों के बजाय ग्रामीण वातावरण में प्रशिक्षित किया जा सका। शिक्षा-प्रसार योजना के अधीन लगभग सभी प्राइमरी स्कूल ग्रामीण क्षेत्रों में खोले जा रहे थे। अतएव अध्यापकों के प्रशिक्षण की नवीन व्यवस्था स्वतः शिक्षा के लिए लाभकर और अपेक्षित थी।

पाठ्यक्रम और पुस्तकों की व्यवस्था

लगभग ७० हजार अध्यापकों को बेसिक शिक्षा पद्धति की ट्रेनिंग प्रदान करने के अतिरिक्त उत्तर प्रदेश में अध्यापकों के लिए विभिन्न हस्त-कौशल सम्बन्धी "पथ प्रदर्शक पुस्तकें" तैयार की गयीं। यह अनुभव किया गया कि बेसिक शिक्षा का अध्यापनकार्य इतना महत्वपूर्ण है कि वह बिना पाठ्य-पुस्तकों के सम्पन्न नहीं किया जा सकता और न ही संभव था कि पाठ्य विषय की संक्षिप्त रूप रेखा के बिना प्रत्येक अध्यापक हस्तकौशल की शिक्षा प्रदान कर सके। क्योंकि हस्तकौशल सम्बन्धी विषयों का अध्यापन और अध्ययन अन्योन्याश्रित है। अतएव अध्यापकों के लिए पाठ्य-पुस्तकों की बहुत अधिक आवश्यकता प्रतीत हुई। साथ ही विद्यार्थियों के अभिभावकों को केवल मौखिक पढ़ाई से संतोष न होना स्वाभाविक था। इसके लिय भी पाठ्य पुस्तकें होना अनिवार्य था। अतएव वर्धा समिति और आचार्य नरेन्द्र देव समिति की रिपोर्टों के आधार पर पाठ्य-पुस्तकों की रूप रेखा निर्धारित की गयी।

स्पष्ट परिवर्तन

जिन बेसिक स्कूलों में हस्तकौशल को स्थान दिया गया वहां इस प्रकार के अध्ययन के निमित्त आवश्यक सामग्री और सुविधाओं की व्यवस्था भी जरूरी थी। इसके लिए प्रत्येक स्कूल को लगभग २५० रु० का सामान और प्रासंगिक व्यय के लिए ३३ रु० और दिये गये। इन बेसिक स्कूलों में काफी सामान बनने की आशा की जाती थी,

जिसको स्कूलों के स्टोरों में एकत्र करना व्यर्थ होता। अतएव यह निश्चय किया गया कि बच्चों द्वारा बनायी गयी वस्तुओं को लागत के दाम पर बेच दिया जाय। अतएव बिक्री की व्यवस्था के लिए एक मार्केटिंग आफिसर की नियुक्ति की गयी। इस प्रकार विद्यार्थियों द्वारा बनाये गये सामानों की बिक्री से जो धन प्राप्त हो उसे हस्तकौशल के विकास के निमित्त व्यय करने का निश्चय किया गया।

बेसिक शिक्षा पद्धति ग्रहण करने पर प्राइमरी स्कूलों की स्थिति में यथेष्ट सुधार हुआ। विद्यार्थियों के लिए नयी शिक्षा-पद्धति अधिक रुचिकर सिद्ध हुई। साथ ही विद्यार्थियों की स्वाभाविक प्रवृतियों को विकास का अधिक अवसर मिला।

स्कूल भवन

बेसिक शिक्षा पद्धति के निरंतर प्रसार के साथ-साथ पुराने स्कूलों के विकास की भी आवश्यकता थी। अतएव संतोषजनक कार्य के लिए इन स्कूलों को लगभग ५०० रु० के मूल्य का सामान देने का निश्चय किया गया। इसके लिए १ करोड़ ६० लाख रु० की आवश्यकता थी। इन स्कूलों के लिए भवनों की भी जरूरत थी। बेसिक स्कूलों में तीन अध्यापक एक हस्तकौशल का कमरा, साथ में एक अच्छा सा मैदान और एक उद्यान होता है। प्राइमरी स्कूल की भवन की लागत सामान्यतः ४,००० रु० होती है। सरकार ने शिक्षा-प्रसार योजना के अधीन जनता के सहयोग से १०,००० से भी अधिक स्कूल भवन बनवाये। सरकार की ओर से भवन-निर्माण कार्य के लिए प्रत्येक स्कूल को १ हजार रु० दिया गया, शेष धन की व्यवस्था स्थानीय जनता द्वारा की गयी। जनता ने नवीन शिक्षा योजना का स्वागत कर अपना उचित सहयोग प्रदान किया। इस भांति उत्तर प्रदेश ने बेसिक शिक्षा की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति की।

पी० एस० यू० पी० ए० पी०--२ जनरल (पब्लिक०)—१९५५--५०,०००